रमेश कुमार यादव
हिन्दी विभाग
डी. के. कालेज
डुमरांव(बक्सर)

विषय - हिन्दी प्रतिष्ठा - बी. ए० तृतीय वर्ष

भारतीय काव्य शास्त्र

काव्य-प्रयोजन :- काव्य-प्रयोजन से अभिप्राय है- काव्य रचना के उपरान्त उससे प्राप्त फल, जो कि दो प्रकार के व्यक्तियों को मिलता है (1) कवि को (2) सहृदय को अर्थात महाकाव्य आदि के पाठक तथा नाटक के प्रेक्षक को।

विभिन्न काव्य-प्रयोजन :- संस्कृत के निम्नोक्त प्रख्यात काव्यशास्त्रियों ने विभिन्न काव्य-प्रयोजनों की गणना की है:

भामह उत्तम काव्य की रचना धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूप चारों पुरुषार्थों को, तथा समस्त कलाओं में निपुणता को, और प्रीति (आनन्द) तथा कीर्ति को उत्पन्न करती है। भामह के उपरान्त प्रायः सभी आचार्य के सम्मुख इस दिशा में सम्भवतः इन्ही का आदर्श रहा।

भरत :- नाट्य (काव्य) धर्म, यश और आयु का साधक, हितकारक, बुद्धि का वर्द्धक तथा लोकोपदेशक होता है।

वामन और भोजराज :- कीर्ति और प्रीति को काव्य का प्रयोजन मानते हैं।

रूद्रट :- उक्त पुरुषार्थ- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के अतिरिक्त अनर्थ का उपशम, विपत्ति का निवारण, रोग से विमुक्ति तथा अभिमत वर की प्राप्ति। काव्यरचना के उपरान्त प्राप्त फल।

कुन्तक :- चारों पुरुषार्थों के अतिरिक्त व्यवहार के औचित्य का ज्ञान, हृदय का आह्लाद अथवा अन्तश्चमत्कार।

इस प्रकार अब मम्मट के सम्मुख काव्य-प्रयोजन की उक्त सूची प्रस्तुत थी, जिसे उन्होंने इस रूप में ढाल दिया —

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये ।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे ॥

काव्य से यश की प्राप्ति होती है, अर्थ मिलता है, व्यवहार-ज्ञान होता है, अमङ्गल का नाश होता है। परन्तु लोकातीत आनन्द काव्य द्वारा मिलता है और कान्ता के समान मधुर, प्रिय लगनेवाला उपदेश भी मिलता है। काव्य के माध्यम से आयी हुई शिक्षा हृदय पर प्रभाव डालती है और भुलायी नहीं जा सकती। इस प्रकार वैयक्तिक और सामाजिक, लौकिक और आध्यात्मिक सभी प्रयोजनों का संकेत इसमें मिल जाता है।

विवेचन :-

मम्मट ने उक्त छः काव्य-प्रयोजनों में से 'सद्यः परनिर्वृति' अर्थात काव्य-पठन अथवा नाटक-प्रेक्षण के साथ ही साथ 'तुरन्त परम आनन्द-रसास्वाद' की प्राप्ति को काव्य का सर्वप्रथम प्रयोजन माना है। इसके उपरान्त, स्पष्टतः, दूसरा स्थान कान्ता-सम्मित उपदेश को देना चाहिए। काव्य द्वारा प्राप्त उपदेश भी प्रेयसी द्वारा दिये गये उपदेश के समान मधुर एवं सहज मान्य होता है।

इस सम्बन्ध में एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि इन प्रयोजनों में से किन का अधिकारी कवि है और किनका सहृदय। स्पष्ट है कि यश, धन और रोग-नाश का सीधा सम्बन्ध कवि के साथ है और व्यवहार-ज्ञान तथा कान्ता-सम्मित उपदेश का सीधा सम्बन्ध सहृदय के साथ। किन्तु काव्यों के अध्ययन-अध्यापन द्वारा कोई सहृदय यश और अर्थ भी प्राप्त कर सकते हैं,

और स्वनिर्मित ग्रन्थों के द्वारा कोई कवि भी व्यवहार-ज्ञान अथवा उपदेश ग्रहण करते रहते हैं- अतः सहृदय और कवि भी उक्त दो-दो प्रयोजनों के अधिकारी उपचार द्वारा माने जा सकते हैं। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि रोग-नाश नामक प्रयोजन (जैसे -'हनुमान बाहुक' की रचना से तुलसीदास को बाहुपीड़ा-रोग से छुटकारा मिल गया) इस वैज्ञानिक युग में मान्य नहीं हो सकता।

शेष बचा एक प्रयोजन - रसास्वाद-प्राप्ति। मम्मट के टीकाकारों के अनुसार सहृदय ही इसका भोक्ता है। कवि को भी यदि अपने कव्य से रसास्वाद-प्राप्ति होगी तो उसे तत्क्षण के लिए सहृदय ही मानना होगा।

कवि अपने काव्य द्वारा रसास्वाद प्राप्त करता है- इस समस्या के दो पक्ष हैं- (1) क्या कवि काव्य-रचना के समय रसास्वाद प्राप्त करता है? (2) क्या कवि काव्य-रचना के उपरान्त कभी उससे रसास्वाद प्राप्त करता है? इन दोनों प्रश्नों का संक्षेप में उत्तर है- हाँ। आइए, अब इस पर विचार करें —

(1) वाल्मीकि ने क्रौंच-मिथुन में से एक के बध को देखकर शोक का अनुभव किया- यहाँ तक वे सामान्य व्यक्ति हैं, किन्तु उक्त घटना के 'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगम:' इस श्लोक-रूप में वह वस्तुतः उस लौकिक घटना से ऊपर उठ चुके होते हैं; उनका यह शोक व्यक्तिनिष्ठ न रहकर समष्टिनिष्ठ बन जाता है, अर्थात् यह घटना क्रौंच्च पक्षी की न रहकर किसी भी वियुक्त प्राणी की बन जाती है, और इसका कारण होता है कवि के इस

जन्म एवं पूर्व जन्मों के अनुभवजन्य संस्कार। व्यक्तिनिष्ठता से रहित यह समग्र घटना कवि को रसास्वाद-प्राप्ति कराती रहती है। हाँ, रचना करते समय जिन क्षणों में किसी प्रकार का चिन्तन बाधा उपस्थित करता है तो उन क्षणों में रसास्वाद की शृंखला टूट जाती है, किन्तु बाधा के दूर होते ही पुनः जुड़ जाती है। वस्तुतः ठीक यही स्थिति सामान्य सहृदय की भी होती है, जब उसे किसी रचना को पढ़ते समय उसके किसी विषय पर कुछ विचार करना पड़ता है।

(2) अपनी रचना को पढ़ते समय भी कवि रसास्वाद प्राप्त करता है। यद्यपि रचना में कवि का स्वत्व विद्यमान रहता है, किन्तु तल्लीनता के कारण जब वह अपने स्वत्व को भूल जाता है तभी उसे रसास्वाद-प्राप्ति होने लगती है। हाँ, जिन क्षणों में वह उसे किसी कारणवश नहीं भूल पाता तो वे क्षण उसकी रसास्वाद-प्राप्ति में बाधक होते हैं, यद्यपि यह शृंखला तुरन्त जुड़ जाती है।

उक्त समग्र विवेचन का निष्कर्ष यह है:

(1) काव्य-प्रयोजन कहते हैं काव्य द्वारा प्राप्त फल को। काव्य हेतु काव्य-रचना का कारण है। वह पूर्ववर्ती होता है, किन्तु काव्य-प्रयोजन काव्य-रचना के उपरान्त फल की उपलब्धि है।

(2) मम्मट-समस्त छः काव्य प्रयोजनों में से सद्यः पर-निर्वृति सर्वोत्कृष्ट प्रयोजन है, और इसके उपरान्त कान्ता-सम्मित उपदेश का स्थान है।

काव्य और कला जीवन के लिए है, इसे कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता। जीवन के विकास और उत्कर्ष के साथ कला का स्थान महत्वपूर्ण होता जा रहा है, उसकी व्यापकता बढ़ती जा रही है। यदि काव्य और कलाओं को जीवन से निकाल दिया जाय, तो जीवन का जो रूप होगा उसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त काव्य जीवन को प्रेरणा प्रदान करता है, उसमें एक सरसता और उत्साह का संचार करता है। उदासी और चिन्ता के क्षणों में मन को प्रसन्न करने की उसमें शक्ति है।

आदर्श और यथार्थ जीवन के दोनों पक्षों का चित्रण काव्य करता है। यथार्थ के आधार पर हम आदर्श की ओर अग्रसर होते हैं। अत: आदि से अन्त तक काव्य और कला में जीवन की झाँकी रहती है।

रमेश कुमार यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर
डी. के. कॉलेज, डुमरॉंव
बक्सर (बिहार)